संकट मोचन विनती

हे दीनबंधु श्रीपति, करुणानिधानजी।
यह मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी।। टेक।।
मालिक हो दो जहानके जिनराज आपही।
एबो हुनर हमारा कुछ तुमसे छिपा नहीं।।
बेजान में गुनाह मुझसे बन गया सही।
ककरीके चोरको कटार मारिये नहीं।। हो..... ॥१॥
दुखदर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही।
मुश्किल कहर बहरसे लिया हैं भुजा गही।।
जस वेद श्री पुरान में प्रमान हैं यही।
आनंदकंद श्रीजिनंद देव है तुही।। हो..... ॥२॥
हाथीपै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती।
गंगामें ग्राहने गही गजराजकी गती।।
उस वक्त में पुकार किया था तुम्हें सती।
भय टारके उबार लिया हे कृपापती।। हो..... ॥३॥
पावक प्रचंड कुंडमें उमंड जब रहा।
सीतासे शपथ लेने को तब रामने कहा।।
तुम ध्यानधार जानकी पग धारती तहां।
तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा।। हो..... ॥४॥
जब चीर द्रोपदीका दुःशासन ने था गहा।
सबही सभा के लोग थे कहते हहा हहा।।
उस वक्त भीर पीरमें तुमने करी सहा।
परदा ढका सतीका सुजस जगतमें रहा।। हो..... ॥५॥

श्रीपालको सागर विषैं जब सेठ गिराया।
उनकी रमासे रमने को आया वो बेहया।।
उस वक्त के संकट में सती तुमको जो ध्याया।
दुख-दंद-फंद मेटके आनंद बढ़ाया।। हो..... ॥६॥

हरिषेणकी माताको जहां सौत सताया।
रथ जैनका तेरा चलै पीछै यों बताया।।
उस वक्त के अनशनमें सती तुमको जो ध्याया।
चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया।। हो..... ॥७॥
सम्यकत्व-शुद्ध शीलवती चंदना सती।
जिसके नगीच लगती थी जाहिर रती रती।।
बेड़ी में पड़ी थी तुम्हें जब ध्यावती हती।
तब वीर धीरने हरी दुखदंदकी गती।। हो..... ॥८॥
जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा।
तब सासने कलंक लगा घरसे निकारा।।
वनवर्ग के उपसर्ग में तब तुमको चितारा।
प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा।। हो..... ॥९॥
सोमासे कहा जो तु सती शील विशाला।
तो कुंभतैं निकाल भाला नाग जु काला।।
उस वक्त तुम्हें ध्याय के सति हाथ जब डाला।
तत्काल ही वह नाग हुआ फूलकी माला।। हो..... ॥१०॥
जब कुष्ट रोग था हुआ श्रीपालराजको।
मैना सती की, आपकी पूजा, इलाजको।।
तत्काल ही सुंदर किया श्रीपाल राजकौ।
वह राजरोग भाग गया मुक्तराजको।। हो..... ॥११॥
जब सेठ सुर्दशन को मृषा दोष लगाया।
रानीके कहे भूपने सूली पै चढ़ाया।।
उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया।
सूलीसे उतारुस्को सिंहासनपै बिठाया।। हो..... ॥१२॥
जब सेठ सुधन्नाजी को वापी में गिराया।
ऊपर से दुष्ट फिर उसे वह मारने आया।।
उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने में ध्याया।

तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया।।
हो दीनबंधु श्रीपति, करुणानिधानजी।
यह मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी।। हो..... ॥१३॥
इक सेठके धरमें किया दारिद्र ने डेरा।
भोजन का ठिकाना भिन था साँझ सवेरा।।
उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यान में घेरा।
घर उसके में तब कर दिया लक्ष्मी का बसेरा।। हो..... ॥१४॥
बलि वाद में मुनिराज सों जब पार न पाया।
तब रात को तलवार ले शठ मारने आया।।
मुनिराजने निजध्यांन में मन लीन लगाया।
उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहां देव बचाया।। हो..... ॥१५॥
जब रामने हनुमंत को गढ़लंक पठाया।
सीताकी खबर लेने को सह सैन्य सिधाया।।
मग बीच दो मुनिराज की लख आग में काया।
झट वारि मूसलधार से उपसर्ग मिटाया।। हो..... ॥१६॥
जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा।
घेरे में पड़ा था वह वज्र-कर्ण विचारा।।
उस वक्त तुम्हें प्रेम से संकट में चितारा।
रघुवीर ने सब दुःख तहां तुरत निवारा।। हो..... ॥१७॥
रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांव में बेरी।
उस वक्त तुम्हें ध्यान में ध्याया था सबेरी।।
तत्काल ही सुकुमालकी सब झड़ पडी बेरी।
तुम राजकुंवर की सभी दुखदंद निवेरी।। हो..... ॥१८॥
जब सेठ के नंदनको डसा नाग जु कारा।
उसवक्त तुम्हें पीर में घर धीर पुकारा।।
तत्काल ही उस बाल का विष भूरि उतारा।
वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा।। हो..... ॥१९॥

मुनि मानतुंग को दथ जब भूप ने पीरा।
ताले में किये बंद भरी लोहजंजीरा।।
मुनिईश ने आदीशकी थुति की है गंभीरा।
चक्रेश्वरी तब आनिके झट दूर की पीरा।। हो..... ॥२०॥
शिवकोटिने हट था किया सामंतभद्रसों।
शिव पिंडकी बंदन करो शंको अभद्रसों।।
उस वक्त स्वयंभू रचा गुरु भावभद्रसों।
जिनचंद्र की प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों।। हो..... ॥२१॥
तोते ने तुम्हें आनिके फल आम चढ़ाया।
मेंढ़क ले चला फूल भरा भक्तिका भाया।।
तुम दोनों को अभिराम स्वर्गधाम बसाया।
हम आपसे दातार को लख आज ही पाया। हो..... ॥२२॥
कपि श्वान सिंह नवला अज बैल बिचारे।
तिर्यंच जिन्हें रंच न था बोध, चितारे।।
इत्यादिको सुर धाम दे शिवधाममें धारे।
हम आपसे दातार को प्रभु आज निहारे।। हो..... ॥२३॥
तुम ही अनंत जंतुका भय भीर निवारा।
वेदोपुराण में गुरू गणधरने उचारा।
हम आपकी सरनागतीमें आके पुकारा।।
तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा।। हो..... ॥२४॥
प्रभु भक्त व्यक्त भक्त जक्त मुक्त के दानी।
आनंद कंद वृंदको हो मुक्त के दानी।।
मोहि दीन जान दीनबंधु पातक भानी।
संसार विषम खार तार अंतर जामी।। हो..... ॥२५॥

करुणानिधान बानको अब क्यों न निहारो।
दानी अनंतदानके दाता हो सँभारो।।
वृषचंदनंद 'वृंद' का उपसर्ग निवारो।
संसार विषम खार से प्रभु पार उतारो।। हो..... ॥२६॥